16 अप्रैल 2020

विषय ★★इतिहास
पार्ट 1 सब्सिडरी/सामान्य
व्यख्यान
प्रसंग ■ इल्तुतमिश { व्याख्यान संख्या 2}

By डॉ० शिशिर कुमार झा
इतिहास विभाग
MLS COLLEGE SARISAB PAHI MADHUBANI

कठिनाइयों से सामना★★★★★

इल्तुतमिश के अधीन दिल्ली सल्तनत का विस्तार
सुल्तान का पद प्राप्त करने के बाद इल्तुतमिश को कुछ कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

उसकी प्रारम्भिक कठानाई अनेक गद्दी के दावेदारों का होना था। जिनका बाद में 'कुल्बी'

अर्थात कुतुबद्दीन ऐबक के समय सरदार तथा 'मुइज्जी' अर्थात् मुहम्मद ग़ोरी के समय के

सरदारों के विद्रोह का दमन किया। इल्तुमिश ने इन विद्रोही सरदारों पर विश्वास न करते हुए

अपने 40 ग़ुलाम सरदारों का एक गुट या संगठन बनाया, जिसे 'तुर्कान-ए-चिहालगानी' का

नाम दिया गया। इस संगठन को 'चरगान' भी कहा जाता है। इल्तुतिमिश के समय में ही अवध में पिर्थू विद्रोह हुआ।
1215 से 1217 ई. के बीच इल्तुतिमिश को अपने दो प्रबल प्रतिद्वन्द्धी 'एल्दौज' और

'नासिरुद्दीन क़बाचा' से संघर्ष करना पड़ा। 1215 ई. में इल्तुतिमिश ने एल्दौज को

644759062में पराजित किया। 1217 ई. में इल्तुतिमिश ने कुबाचा से लाहौर छीन लिया

तथा 1228 में उच्छ पर अधिकार कर कुबाचा से बिना शर्त आत्मसमर्पण के लिए कहा।

अन्त में कुबाचा ने सिन्धु नदी में कूदकर आत्महत्या कर ली। इस तरह इन दोनों प्रबल विरोधियों का अन्त हुआ।

मंगोलों से बचाव ☆★★

मंगोल आक्रमणकारी चंगेज़ ख़ाँ की बेटी से से जलालुद्दीन मुगबर्नी का प्रेमप्रसंग था जिसके के भय से भयभीत होकर ख्वारिज्म शाह का पुत्र 'जलालुद्दीन मुगबर्नी' वहां से भाग कर पंजाब की ओर आ गया। चंगेज़ ख़ाँ उसका पीछा करता हुए लगभग 1220-21 ई. में सिंध तक आ गया। उसने इल्तुतमिश को संदेश दिया कि वह मंगबर्नी की मदद न करें। यह संदेश लेकर चंगेज़ ख़ाँ का दूत इल्तुतमिश के दरबार में आया। इल्तुतमिश ने मंगोल जैसे शक्तिशाली आक्रमणकारी से बचने के लिए मंगबर्नी की कोई सहायता नहीं की। मंगोल आक्रमण का भय 1228 ई. में मंगबर्नी के भारत से वापस जाने पर टल गया। कुतुबुद्दीन ऐबक की मृत्यु के बाद अली मर्दान ने बंगाल में अपने को स्वतन्त्र घोषित कर लिया तथा 'अलाउद्दीन' की उपाधि ग्रहण की। दो वर्ष बाद उसकी मृत्यु हो गई। इसके बाद उसका पुत्र 'हिसामुद्दीन इवाज' उत्तराधिकारी बना। उसने 'ग़यासुद्दीन आजिम' की उपाधि ग्रहण की तथा अपने नाम के सिक्के चलाए और खुतबा (उपदेश या प्रशंसात्मक रचना) पढ़वाया।

विजय अभियान ★★★★★

1225 में इल्तुतमिश ने बंगाल में स्वतन्त्र शासक 'हिसामुद्दीन इवाज' के विरुद्ध अभियान छेड़ा। इवाज ने बिना युद्ध के ही उसकी अधीनता में शासन करना स्वीकार कर लिया, पर इल्तुतमिश के पुनः दिल्ली लौटते ही उसने फिर से विद्रोह कर दिया। इस बार इल्तुतमिश के पुत्र नसीरूद्दीन महमूद ने 1226 ई. में लगभग उसे पराजित कर लखनौती पर अधिकार कर लिया। दो वर्ष के उपरान्त नासिरुद्दीन महमूद की मृत्यु के बाद मलिक इख्तियारुद्दीन बल्का ख़लजी ने बंगाल की गद्दी पर अधिकार कर लिया। 1230 ई. में इल्तुतमिश ने इस विद्रोह को दबाया। संघर्ष में बल्का ख़लजी मारा गया और इस बार एक बार फिर बंगाल दिल्ली सल्तनत के अधीन हो गया। 1226 ई. में इल्तुतमिश ने रणथंभौर पर तथा 1227 ई. में परमरों की राजधानी मन्दौर पर अधिकार कर लिया। 1231 ई. में इल्तुतमिश ने ग्वालियर के क़िले पर घेरा डालकर वहाँ के शासक मंगलदेव को पराजित किया। 1233 ई. में चंदेलों के विरुद्ध एवं 1234-35 ई. में उज्जैन एवं भिलसा के विरुद्ध उसका अभियान सफल रहा।

16 अप्रैल 2020

विषय ■इतिहास
पार्ट 1 सब्सिडरी/सामान्य
व्यख्यान
प्रसंग ■ बौद्धधर्म (व्यख्यान संख्या 1)

By डॉ० शिशिर कुमार झा
इतिहास विभाग
MLS COLLEGE SARISAB PAHI MADHUBANI

बुद्ध का वास्तविक नाम सिद्धार्थ था। उनका जन्म 563 ई.पू. में कपिलवस्तु (शाक्य महाजनपद की राजधानी) के पास लुंबिनी (वर्तमान में दक्षिण मध्य नेपाल) में हुआ था। इसी स्थान पर सम्राट अशोक ने बुद्ध की स्मृति में एक स्तम्भ बनाया था।

सिद्धार्थ के पिता शाक्यों के राजा शुद्धोदन थे। परंपरागत कथा के अनुसार, सिद्धार्थ की माता महामाया उनके जन्म के सात दिन बाद मर गयी थी। कहा जाता है कि उनका नाम रखने के लिये 8 ऋषियो को आमन्त्रित किया गया था, सभी ने 2 सम्भावनायें बताई थी, (1) वे एक महान राजा बनेंगे (2) वे एक साधु या परिव्राजक बनेंगे। इस भविष्य वाणी को सुनकर राजा शुद्धोदन ने अपनी योग्यता की हद तक सिद्धार्थ को साधु न बनने देने की बहुत कोशिशें की। शाक्यों का अपना एक संघ था। बीस वर्ष की आयु होने पर हर शाक्य तरुण को शाक्यसंघ में दीक्षित होकर संघ का सदस्य बनना होता था। सिद्धार्थ गौतम जब बीस वर्ष के हुये तो उन्होंने भी शाक्यसंघ की सदस्यता ग्रहण की और शाक्यसंघ के नियमानुसार सिद्धार्थ को शाक्यसंघ का सदस्य बने हुये आठ वर्ष व्यतीत हो चुके थे। वे संघ के अत्यन्त समर्पित और पक्के सदस्य थे। संघ के मामलों में वे बहत रूचि रखते थे। संघ के सदस्य के रूप में उनका आचरण एक

उदाहरण था और उन्होंने स्वयं को सबका प्रिय बना लिया था। संघ की सदस्यता के आठवें वर्ष में एक ऐसी घटना घटी जो शुद्धोदन के परिवार के लिये दुखद बन गयी और सिद्धार्थ के जीवन में संकटपूर्ण स्थिति पैदा हो गयी। शाक्यों के राज्य की सीमा से सटा हुआ कोलियों का राज्य था। रोहणी नदी दोनों राज्यों की विभाजक रेखा थी। शाक्य और कोलिय दोनों ही रोहिणी नदी के पानी से अपने-अपने खेत सींचते थे। हर फसल पर उनका आपस में विवाद होता था कि कौन रोहिणी के जल का पहले और कितना उपयोग करेगा। ये विवाद कभी-कभी झगड़े और लड़ाइयों में बदल जाते थे। जब सिद्धार्थ २८ वर्ष के थे, रोहणी के पानी को लेकर शाक्य और कोलियों के नौकरों में झगड़ा हुआ जिसमें दोनों ओर के लोग घायल हुये। झगड़े का पता चलने पर शाक्यों और कोलियों ने सोचा कि क्यों न इस विवाद को युद्ध द्वारा हमेशा के लिये हल कर लिया जाये। शाक्यों के सेनापति ने कोलियों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा के प्रश्न पर विचार करने के लिये शाक्यसंघ का एक अधिवेशन बुलाया और संघ के समक्ष युद्ध का प्रस्ताव रखा। सिद्धार्थ गौतम ने इस प्रस्ताव का विरोध किया और कहा युद्ध किसी प्रश्न का समाधान नहीं होता, युद्ध से किसी उद्देश्य की पूर्ति नहीं होगी, इससे एक दूसरे युद्ध का बीजारोपण होगा। सिद्धार्थ ने कहा मेरा प्रस्ताव है कि हम अपने में से दो आदमी चुनें और कोलियों से भी दो आदमी चुनने को कहें। फिर ये चारों मिलकर एक पांचवा आदमी चुनें। ये पांचों आदमी मिलकर झगड़े का समाधान करें। सिद्धार्थ का प्रस्ताव बहुमत से अमान्य हो गया साथ ही शाक्य सेनापति का युद्ध का प्रस्ताव भारी बहुमत से पारित हो गया। शाक्यसंघ और शाक्य सेनापति से विवाद न सुलझने पर अन्ततः सिद्धार्थ के पास तीन विकल्प आये। तीन विकल्पों में से उन्हें एक विकल्प चुनना था (1) सेना में भर्ती होकर युद्ध में भाग लेना,

(2) अपने परिवार के लोगों का सामाजिक बहिष्कार और उनके खेतों की जब्ती के लिए राजी होना, (3) फाँसी पर लटकना या देश निकाला स्वीकार करना। उन्होंने तीसरा विकल्प चुना और परिव्राजक बनकर देश छोड़ने के लिए राज़ी हो गए।परिव्राजक बनकर सर्वप्रथम सिद्धार्थ ने पाँच ब्राह्मणों के साथ अपने प्रश्नों के उत्तर ढूंढने शुरू किये। वे उचित ध्यान हासिल कर पाए, परंतु उन्हें अपने प्रश्नों के उत्तर नहीं मिले। फ़िर उन्होने तपस्या करने की कोशिश की। वे इस कार्य में भी वे अपने गुरुओं से भी ज़्यादा, निपुण निकले, परंतु उन्हे अपने प्रश्नों के उत्तर फ़िर भी नहीं मिले। फ़िर उन्होने कुछ साथी इकठ्ठे किये और चल दिये अधिक कठोर तपस्या करने। ऐसे करते करते छः वर्ष बाद, बिना अपने प्रश्नों के उत्तर पाएं, भूख के कारण मृत्यु के करीब से गुज़रे, वे फ़िर कुछ और करने के बारे में सोचने लगे। इस समय, उन्हें अपने बचपन का एक पल याद आया, जब उनके पिता खेत तैयार करना शुरू कर रहे थे। उस समय वे एक आनंद भरे ध्यान में पड़ गये थे और उन्हे ऐसा महसूस हुआ था कि समय स्थिर हो गया है

कठोर तपस्या छोड़कर उन्होने अष्टांगिक मार्ग ढूंढ निकाला, जो बीच का मार्ग भी कहलाता जाता है क्योंकि यह मार्ग दोनो तपस्या और असंयम की पराकाष्ठाओं के बीच में है। अपने बदन में कुछ शक्ति डालने के लिये, उन्होने एक बकरी-वाले से कुछ दूध ले लिया। वे एक पीपल के पेड़ (जो अब बोधि पेड़ कहलाता है) के नीचे बैठ गये प्रतिज्ञा करके कि वे सत्य जाने बिना उठेंगे नहीं। ३५ की उम्र पर, उन्होने बोधि पाई और वे बुद्ध बन गये। उनका पहिला धर्मोपदेश वाराणसी के पास सारनाथ मे था।

अपने बाकी के ४५ वर्ष के लिये, गौतम बुद्ध ने गंगा नदी के आस-पास अपना धर्मोपदेश दिया, धनवान और कंगाल लोगों दोनो को। उन्होने दो सन्यासियों के संघ की भी स्थापना जिन्होने बुद्ध के धर्मोपदेश को फ़ैलाना जारी रखा।